ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 198-200
www.allresearchjournal.com
Received: 12-11-2015
Accepted: 19-12-2015

दुर्गानन्द यादव
शोधार्थी, ल.ना.मि. विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
दुर्गानन्द यादव
शोधार्थी, ल.ना.मि. विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

सामाजिक–सांस्कृतिक और राष्ट्रीय संदर्भ में छायावाद

दुर्गानन्द यादव

सारांश
छायावाद परोक्ष जीवन की नहीं, प्रत्यक्ष जीवन की ही अनुभूति है। इसमें वायवीयता के धरातल पर मांसलता की अभिव्यक्ति है। यह कल्पना द्वारा उत्पादित जीवन–चित्रों की सरल काव्य–धारा है और सरस काव्य प्रत्यक्ष संसार से मुँह मोड़कर नहीं लिखा जा सकता है। वह लाक्षणिक शैली मात्र भी नहीं है। वरन् छायावाद अगम अगोचर, अनाम, अव्यक्त, अज्ञात, अतित तथ्यों का पुंज है, जिसमें कवियों ने अपनी मन की बात को अभिव्यक्त किया है। छायावादी कवियों ने सूक्ष्म संकेतात्मक प्रतीक योजना में निबद्ध अभिव्यंजना की विभिन्न भंगिमाओं को संवेदना के सम्पुट में प्रस्तुत किया है। उनका स्वर सामाजिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय, मानवतावादी आदि का सम्यक प्रतिफल है। वे मुक्ति चाहते हैं– ''एक ओर कवि की रूढ़ियों से, दूसरी ओर सामाजिक एवं राष्ट्रीय पराधीनता के बंधनों से।''

प्रस्तावना
'छायावाद' की शुरुआत 1918ई. के आसपास मानी जाती है। सन् 1920 तक 'छायावाद' नाम का प्रचलन हो गया था। मुकुटधर पाण्डेय 1920 में 'श्री शारदा' के लगातार चार अंकों में 'हिंदी में छायावाद' शीर्षक से एक लेखमाला लिखी थी। जून 1920ई. की 'सरस्वती' में हिंदी में 'छायावाद' शीर्षक से ही सुशील कुमार का एक व्यंग्यात्मक निबंध प्रकाशित हुआ। इन निबंधों में छायावाद में छायावाद का प्रयोग रहस्यवाद के अर्थ में ही हुआ है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, नंददुलारे वाजपेयी एवं रामचन्द्र शुक्ल छायावाद को रहस्यवाद का पर्याय तो नहीं समझते, पर उसे आध्यात्मिकता से जोड़कर देखते अवश्य हैं।
छायावाद का जन्म रीतिकाल के अतिशत लाक्षणिकता, दरबारीपन, राजमहलों के सौन्दर्य–निस्पादन (वर्णन), द्विवेदी–काल की रूखी इतिवृतात्मकता की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ था।
रीतिकालीन कवि नायक–नायिका के सौंदर्य परिधान में इतना खो चुके थे, कि उसे जन–मानस के लिए अवकाश ही नहीं मिला। सामाजिक–सरोकार से कटकर कोई भी साहित्य स्थायित्व प्राप्त नहीं कर सकता। कुछ ऐसा ही रीतिकाल और द्विवेदी–काल के साहित्य–विधा के साथ हुआ। इसी खालीपन को भरने के लिए 'छायावाद' का प्रार्दुभाव होता है, लेकिन क्या छायावाद भी उस कसौटी पर खड़ा उतरता? यह विचारणीय है।
'छायावाद' से पूर्व कविता में देवताओं, राजा–महाराजाओं, अपूर्व सुंदरियाँ आदि केंद्र में हुआ करते थे। वह स्थान साधारण मनुष्य ने ले लिया। यह प्रजातांत्रिक भाव की विजय है, साथ ही मध्यवर्ग की पहली सामाजिक स्वाधीनता है। जब यह स्वाधीनता प्रणय के क्षेत्र में ली गई तो इसका व्यापक प्रभाव अन्य क्षेत्रों में भी हुआ। निराला ने अपनी पुत्री 'सरोज' की स्मृति में शोकगीत लिखा और उसमें अपने निजी जीवन के अनेक बातों को स्पष्टता से कह डाली। संपादकों द्वारा मुक्तछंद की रचनाओं का लौटाया जाना, विरोधियों के षढ़यंत्र, मातृहीन लड़की की कटु–सत्य, दूसरे विवाह के लिए आते हुए प्रस्ताव और उन्हें ठुकराना, सामाजिक रूढ़ियों को नजरअंदाज करते हुए एकदम नए ढंग से कन्या का विवाह करना। सरोज की आर्थिकाभाव के कारण अकाल मृत्यु, माता–पिता दोनों दायित्व के सम्यक निर्वहन करना आदि–आदि। वरन् अपनी कहानी के माध्यम से पुरानी सामाजिक रूढ़ियों और आधुनिक आर्थिक–दलों पर सम्यक व्यंग्य किया गया है। निराला ने अपने कनौजिया बंधुओं के वास्तविक चरित्र को इस प्रकार व्यक्त किया है–

''ये कन्याकुब्ज–कुल कुलांगार
खाकर पत्तल में करे छेद
इनके कर क्या, अर्थ खेद
इस विषय–बेली में विष ही फल
यह दग्ध मरूस्थल–नहीं सुजल''(1)

उन्होंने जिन रूढ़ियों पर प्रश्न–चिह्न लगाया है, 21वीं सदी में भी किसी अन्य रूप में आकंठ व्याप्त है। वर्तमान में जिस माता–पिता को चार–पाँच कन्यादान करना पड़ता है, उनकी हालात देखने योग्य होती है।

तथाकथित जातिवाद के पहरूए, पुरुषवादी मानसिकता और सड़ांध सामाजिक व्यवस्था वर्तमान में अधिक विकृत रूप में मौजूद है। निराला ने जिस सामंती रूढ़ियों वाले समाज के खोखलने को उद्घाटित किया था, वह समकालीन परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिक है। महादेवी वर्मा ने अपनी रचनाओं में नारी स्वतंत्रता के मूलभूत तथ्यों को मुखरता के साथ व्यक्त की। उन्होंने अपने गीतों में वैक्तिगत ढंग से अभिव्यंजना की और इसके लिए उन्हें कितने कष्ट और प्रवाद झेलने परे, इसे बताने की आवश्यकता नहीं है। लेखिका की नारी के प्रति कर्तव्यबोध वैयक्तिक नहीं है, वरन् वह संपूर्ण नारियों का प्रतिनिधित्व करती है। नारियाँ सदियों से भोग की वस्तु, काम तृप्ति की साधन, यौन संतुष्टि की समान बनकर रह गयी थी।

सार्वजनिक शिक्षा को प्रसाद ने इस धारणाओं और मान्यताओं को पंगु बना दिया। महिलाओं की स्वयं को जानने में बल मिला और सामाजिक रूढ़ियों की बंधन धीरे–धीरे ढीला हुआ। पुरानी दुनिया की सीमित चारदीवारी के भीतर उनका जीवन असहनीय हो गयी थी। नए विज्ञान ने उनके सामने संसार का विराट रूप दिया। लोगों ने पारिवारिक सीमाओं से बाहर निकलकर समाज के कर्मक्षेत्र में आए। देश और समाज के लिए कुछ भी करने की ऊर्जा को ग्रहण किया।

बहरहाल पुरानी सामाजिक–व्यवस्था की घुटन और अवगुंठन से लोगों को निजात मिलना शुरू हुआ। समाज ने जहाँ उन्हें असमिति बाध्यताओं में जकड़ लिया था, वहीं वातावरण ने उनका दिल खोलकर स्वागत किया। आधुनिक युग को प्रकृति के बीच खुला वातावरण मिला, प्रकृति के राज्य में उसे पशु, पक्षियों, नदी, नालों, हवा–बादल सबमें उन्मुक्त और निरंकुश स्वच्छंदता के दर्शन हुए। इसी स्वाधीनता को पाने के लिए छायावादी कवि प्रकृति के क्षेत्र में आया। पुरानी सामाजिक–व्यवस्था में उसकी वैयक्तिकता खो गई थी, वह हर जगह उपेक्षा की नजरों से देखे जाते थे। संयुक्त परिवार में एकांत का सर्वथा खलीपन भरा हुआ था। स्वच्छंद प्रेम के लिए आधुनिक स्त्री–पुरुष तड़पते रह गए।

महाप्राण निराला ने अपनी रचनाओं में प्रेम मार्ग में बाधक और जाति–भेद को तोड़ डाला है। जाति बंधन की दीवार वास्तविक जीवन में नहीं ढहा लेकिन कवि ने अपनी कल्पना लोक से इस अटूट दीवार को छीन्न–भिन्न कर दिया। निराला ने लिखा है–

> ''दोनों हम भिन्न वर्ण
> भिन्न जाति भिन्न रूप
> भिन्न धर्म–भाव पर
> केवल अपनाव से प्राणों से एक थे।''(2)

छायावादी कवियों ने तत्कालीन सामाजिक–व्यवस्था को ध्यान में रखा और अन्योक्ति या समासोक्ति शैली में जन जागरण के लिए अपनी लेखनी को हथियार बनाया। सामाजिक परिवर्तन के वास्तविक स्वरूप और वास्तविक तथ्यों से कवि अनभिज्ञ थे। उसके विषय में कवियों का ज्ञान ओझल था। जो कुछ नवीन चीजें आ रही थी, उसे कुछ–कुछ वे अनुभव करते थे, परंतु संपूर्णता में समझ नहीं पा रहे थे।

नामवर सिंह ने इन तथ्यों पर इस प्रकार अपनी बातें रखा है– ''उनके लिए वह परिवर्तन अनुभव–गम्य तो था परंतु बुद्धि गम्य न था और सबसे बढ़कर तो यह कि उस परिवर्तन के मूल कारण का उन्हें ठीक–ठीक ज्ञान था ही नहीं। इस परिवर्तन के पीछे कौन–सी सामाजिक शक्ति काम कर रही है, इसका विवेक उन्हें स्पष्ट रूप न था। इसी को काव्यात्मक भाव में उन्होंने यों कहा कि वह प्रियत्तम अज्ञात है, आवरण में आता है और सपने में मिलता है।''(3)

छायावादी सौन्दर्य चेतना को 'छायावाद' की सबसे प्रमुख साहित्यिक एवं सांस्कृतिक निधि माना गया है। यह कविता जीवन के आधारभूत तत्वों 'सत्यम्', 'शिवम्', 'सुन्दरम्' में से सौन्दर्य को केन्द्र में रखती है तथा यह सौन्दर्य सत्य और शिव से युक्त है। इन्हीं तथ्यों में नीहित है भारतीय संस्कृति की गौरव–गाथा। भारत की सांस्कृतिक गौरव से प्रेरणा पाकर छायावादी कवियों ने देश के लिए महनीय कार्य किया, जिस पर हम लोग सदैव गौरवान्वित महसूस करते रहेगें।

पंत की समस्त रचनाएँ भारतीय जीवन की समृद्ध सांस्कृतिक चेतना से गहन साक्षात्कार करता है। उनकी रचना एक तरफ ग्रामीण जीवन की पीड़ा से बोध कराती है, वहीं दूसरी ओर भारतीय स्थापत्य कला की ज्योति पुंज 'ताज' के गुणों से रू–ब–रू करती है। वे कृषक जीवन में सन्निहित दुःख–दर्द, अभाव और वेदना की गंगोत्री में पाठक डुबकी लगाने के लिए प्रोत्साहित करते है। वे 'हिमालय' जैसी हमारी संस्कृति की मूल्य को अपनी रचनाओं में पिरोकर उनकी महता से लोगों का ज्ञानवर्द्धन करते हैं। प्रसिद्ध उपन्यासकार 'रेणु' ने उनका कविता 'भारत माता' से 'मैला आंचल' उपन्यास का नाम लिया था। 'भारत माता' कविता में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का उदात्त स्वरूप दिखाई है। कवि ने लिखा है–

> ''दैन्य जड़ित, अपलक नत चितवन,
> अधरों में चिर नीरव रोदन,
> युग–युग के तम से विषण्ण मन,
> वह अपने घर में
> प्रवासिनी!''(4)

पंत ने भारतीय प्राचीन संस्कृति की 'उत्स' पर कविता लिखा। प्रकृति हमारी सांस्कृतिक गरिमा और गौरव की प्रतीक है। इनके ह्रदय में अनगिणित मोती–माणिक्य, रत्न–उपरत्न, औषिध्य गुण आदि की वास है। 'प्रकृति के सुकार कवि' पंत ने छायावादी कवियों में सर्वाधिक इस अमूल्य क्षेत्र को अपने रचना क्षेत्र का विषय बनाया है।

छयावादी काव्य पर प्रायः आरोप लगता रहा है कि स्वाधीनता आंदोलन के सघनतम काल में रचे जाने के बावजूद यह काव्य राष्ट्रीय चेतना से कटा हुआ है। छायावादी कविता को स्थूल दृष्टि से देखने पर ऐसा लगना स्वाभाविक है, किंतु गहन विश्लेषण से विदित होता है कि यह काव्य अपने समय के सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय संदर्भो को धारण ही नहीं करती, बल्कि उनकी प्रगति में यथासंभव योगदान भी देती है।

वैक्तिगत स्वाधीनता प्रकृति का अन्यत्र साहचर्य और स्वावलंबी नारी की शक्ति, सहयोग पाकर आधुनिक पुरुष व्यापक सामाजिक और राजनीतिक जीवन में सक्रिय भागीदारी निभाने लगा। वह केवल प्रेम और सौंदर्य के मकड़ेजाल में उलझा नहीं रहा। उसने केवल प्रेम–राज्य में रूढ़ियों के विरूद्ध आवाज नहीं उठाया, वरन् जीवन के जिस क्षेत्र में उसे विषमता, पराधीनता और अन्याय दिखाई पड़ा, वहीं उसने संघर्ष का विगुल फूंक दिया। इस व्यापक राष्ट्रीय जागरण का प्रभाव छायावाद पर पड़ा।

कोई भी कविता अपने समकालीन यथार्थ से कई स्तरों पर संबंध स्थापित कर सकती है। कुछ कविताएँ ऐसी होती हैं जो अपने समय की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन करके इतिहास बोध का परिचय देती है। घटनाओं के वर्णन से प्रतीत होता है कि कविता अपने समय की दस्तावेज है। दूसरी ओर कुछ कविताएँ ऐसी होती है जो अपने समय की घटनाओं का रोजनामचा नहीं लिखती, बल्कि सांस्कृतिक–सामाजिक सत्यों का गहरा विश्लेषण करती हैं। ऐसी कविताएँ बाहारी कलेवर में समाज से जुड़ी हुई प्रतीत नहीं होती, पर वास्तव में समाज के साथ इनका गहनतम संबंध होता है। छायावादी कविता इसी प्रकार अपने राष्ट्र और समाज से जुड़ी है।

छायावाद में 'जागरण' शब्द का प्रयोग सभी कवियों ने अपने संदर्भों में किया है। यह जागरण सूक्ष्म रूप से सांस्कृतिक नवजागरण और राष्ट्रीय–राजनीतिक जागरण ही है। प्रत्येक गुलाम देश में राष्ट्रीयता की भावना का उदय पुनरूत्थान–भावना से होता है। पुनरूत्थान–भावना प्रसाद में सबसे अधिक था। प्रसाद ने भारत की सांस्कृतिक मूल्यों को पुनर्जीवित करने में सराहनीय कार्य किया। उन्होंने 'हिमालय के आँगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार' या 'शेर सिंह का शस्त्र समर्पण' आदि में राष्ट्रीय संस्कृति और इतिहास को स्मरण कर तत्कालशीन भारतीय युवकों में राष्ट्रीयता का संचार करना चाहा था। प्रसाद कहते हैं–

''बीती विभावरी जाग री।
अम्बर पनघट में डुबो रही–
तारा–घट उषा नागरी''(5)

छायावादी काव्य राष्ट्रीय जागरण की मूल चुनौतियों को गहराई से समझता है। जिस देश में सदियों की पराधीनता के कारण जातीय व सांस्कृतिक स्वाभिमान लुंज–पुंज हो चुका हो, वहाँ जागरण की पहली शर्त राष्ट्रीयता की भावना को बलवती करनी होती है। छायावादी कवि भारत के अतीत से रचनात्मक ऊर्जा ग्रहण करके वर्तमान संघर्षों से जुझते नजर आते हैं। निराला कहते हैं–

''तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा
पत्थर की, निकालो फिर,
गंगा–जल–धारा।''(6)

छायावादी कवि इस बात से पूर्णतः अस्वस्थ थे कि राष्ट्रीय–स्वाभिमान की स्थिति का होना आवश्यक है वे कविता के माध्यम से राष्ट्रीय समस्याओं का केवल विश्लेषण नहीं करते, बल्कि जुझारू मानसिकता के विकास का प्रयत्न भी करते हैं। जिस तरह द्विवेदी युग में 'भारत–भारती' ने पूरे राष्ट्र में सांस्कृतिक ऊर्जा को जन्म दिया था, वैसे ही छायावाद की कविताएँ भी जनमानस में जोश और उमंग पैदा करती है। प्रसाद लिखते हैं–

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से, प्रबुद्धशुद्ध भारती,
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला, स्वतंत्रता पुकारती।''(7)

छायावादी कविता अपने समय से कुछ ऐसे स्तरों पर भी जुड़ी है जो साधारण कविताओं के लिए संभव नहीं होता। कविता अपने समय की घटनाओं का वर्णन करें– यह कविता की सामाजिक दायित्वशीलता का मात्र एक पक्ष है। छायावादी कविता इससे आगे बढ़कर राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक समस्याओं के नई समाधान भी प्रस्तुत करती है। यह अपने समाज की निष्क्रिय, तस्वीरें ही नहीं खींचती, बल्कि समाज के लिए वांछनीय परिवर्तनों के स्तर पर भी सक्रिय होती है। 'राम की शक्ति पूजा' की मूल समस्या यही है। सविनय–अवज्ञा आंदोलन की असफलता के बाद गाँधी जी ने लगभग एक दशक तक कोई भी बड़ा आंदोलन नहीं किया, बल्कि देश में घूम–घूम कर संगठन और लोगों को जागृत करने का काम किया। भारत में अहिंसात्मक शक्ति निरर्थक प्रतीत होने लगी। उसी कालखंड में (1936ई.) निराला जी भी व्यक्तिगत जीवन में असहाय और असुरक्षित महसूस करने लगे। स्वाधीनता के संघर्ष में नए विकल्प के तौर पर निराला सुझाव देते हैं–

''शक्ति की करो मौलिक कल्पना, करो पूजन,
छोड़ दो समर जब तक न सिद्धि हो रघुनन्दन।
रावण अशुद्ध होकर भी यदि कर सका त्रस्त,
तो निश्यच तुम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त।''(8)

समग्रतः छायावाद की राष्ट्रीय चेतना, अपने अंतिम समय में केवल राष्ट्र तक सीमित नहीं रहती, वरन् संपूर्ण मानवता के स्तर पर सक्रिय हो जाती है। यह भारतीय चिंतन–दृष्टि की वही धारणा है जिसमें राष्ट्रीय हितों व वैश्विक हितों के परस्पर विपरीत नहीं, बल्कि सुसंगत सत्यों के रूप में 'वसुधैव कुटुंबकम्' कहकर व्याख्यायित किया जाता है। इस चेतना से युक्त छायावादी कवि कहतें है–

''आरो को हँसते देखो मनु–हँसो और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तृत कर लो, सबको सुखी बनाओ!''(9)

संदर्भ–ग्रंथ

1. अनामिका : निराला, राजकमल प्रकाशन, राजकमल से पहला छात्र संस्करण : 1993, चौथी आवृत्ति : 2002, पृ.– 95
2. अनामिका : निराला, राजकमल प्रकाशन, राजकमल से पहला छात्र संस्करण : 1993, चौथी आवृत्ति : 2002, पृ.– 16
3. छायावाद : नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, पहला संस्करण– 1955, तेरहवीं आवृत्ति– 2014, पृ.– 106
4. प्रसाद निराला, पंत महादेवी की श्रेष्ठ रचनाएँ : प्रस्तुतकर्ता : वाचस्पति पाठक, लोकभारती प्रकाशन, अठारहवाँ संस्करण– 2002, पृ.– 172
5. प्रसाद निराला, पंत महादेवी की श्रेष्ठ रचनाएँ : प्रस्तुतकर्ता : वाचस्पति पाठक, लोकभारती प्रकाशन, अठारहवाँ संस्करण– 2002, पृ.– 61
6. अनामिका : निराला, राजकमल प्रकाशन, राजकमल से पहला छात्र संस्करण : 1993, चौथी आवृत्ति : 2002, पृ.– 100
7. प्रसाद निराला, पंत महादेवी की श्रेष्ठ रचनाएँ : प्रस्तुतकर्ता : वाचस्पति पाठक, लोकभारती प्रकाशन, अठारहवाँ संस्करण– 2002, पृ.– 60
8. अनामिका : निराला, राजकमल प्रकाशन, राजकमल से पहला छात्र संस्करण : 1993, चौथी आवृत्ति : 2002, पृ.– 115
9. कामायनी : जयशंकर प्रसाद, अनुपम प्रकाशन, संस्करण– 2002, पृ.– 60